जनगणना में जाति

राजनीतिज्ञों को ज़्यादा मुफ़ीद है जातियों में बंटा समाज

गु देश में शुरू हो चुकी जनगणना में जाति का सवाल मुंह फाड़ कर खड़ा हो गया है। जाति भारतीय सामाजिक संरचना का ऐतिहासिक विशिष्ट तत्व रही है, जिसने यहां सामंती शोषण की जड़ों को मजबूत और स्थाई बनाने का काम किया है। एक ज़माना था जब यह समझा जाता था कि जैसे-जैसे देश में औद्योगिक विकास होगा, जातिवाद की जड़ें स्वत: धीरे-धीरे कमजोर होती चली जायेंगी। पर देखने में तो यह आ रहा है कि बिलंबित और आधे-अधूरे औद्योगिक विकास जो सदियों के औपनिवेशिक शोषण का परिणाम है, के बावजूद जातिवाद की जड़ें कमजोर होने की जगह और भी मजबूत ही होती चली जा रही हैं। यद्यपि आधे-अधूरे और कमजोर औद्योगिक विकास ने भी जाति को तोड़ने का एक हद तक काम तो किया ही, पर देश की 'लोकतांत्रिक' व्यवस्था ने जातिवाद को कमजोर करने के बजाय इसकी जड़ों को और भी मजबूत करने का ही काम किया है। इसकी वजह है, जातियां अगड़ी हों या पिछड़ी अथवा दलित, इनके आधार पर ही राजनेताओं के वोटबैंक तैयार होते हैं। यही कारण है कि देश के बड़े-बड़े 'जातिवादी' नेता और पिछड़ों के 'मसीहा' जनगणना में जाति को आधार बनाये जाने की खासी वकालत कर रहे हैं, क्योंकि इसके बिना पता ही नहीं चल पायेगा कि देश में कितनी और कौन-कौन सी पिछड़ी, दलित और अगड़ी जातियां हैं। और जब यही पता नहीं चल पायेगा, यानी इसके पक्के आंकड़े नहीं होंगे तो राजनीति करने में मुश्किलें आयेंगी। इसलिए राजनेताओं के दबाव पर इस बात की पूरी संभावना है कि जनगणना में जातिवादी आधार को अपना लिया जाये। यद्यपि सिद्धांतत: ऐसा नहीं होना चाहिए। जहां भी और जैसे भी हो, जाति के उल्लेख को निरुत्साहित करने में ही समाज को लाभ है।

इस बात को भूला नहीं जा सकता कि एक ज़माना वह भी था जब रेलवे स्टेशनों और बस स्टैंडों पर 'हिंदू चाय' और 'मुस्लिम चाय' अलग-अलग बिका करती थी। शूद्रों को ऊंची जाति के लिए 'आरक्षित' कुओं से पानी लेने का अधिकार नहीं था। इस संबंध में प्रेमचंद की कहानी 'ठाकुर का कुआं' को भूला नहीं जा सकता और न ही 'सद्गति' को। भारतीय इतिहास के शुरू से लेकर अब तक के दौर में जाति के नाम पर अन्याय और क्रूरता का ऐसा नंगा नाच होता हो रहा है जिसकी मिसाल मिलना मुश्किल है। स्वतंत्र भारत के इतिहास में भी हालिया दौर में 'हरिजन-दहन' की घटनायें होती रही हैं और अभी भी गाहे-बेगाहे हो जाती हैं। भारत सरकार के तमाम 'प्रयासों' के बावजूद अभी भी जब हम इक्कीसवीं सदी में जीने का गौरव गान कर रहे हैं, जाति के नाम पर देश के तमाम हिस्सों में उत्पीड़न और अन्याय का दौर जारी है। भारतीय सामाजिक संरचना से जाति का तत्व समाप्त होने का नाम नहीं ले पा रहा है। उच्च जातियों के लोग़ अगर ग़रीब और हर तरह से पिछड़े हुए भी हैं, फ़िर भी उनमें ऊंची जाति से होने का झूठा दंभ दिखाई पड़ता है और वे दलित जातियों को अपमानित एवं पददलित करने का कोई मौका चूकना नहीं चाहते। इसी तरह आर्थिक दृष्टि से अच्छी स्थिति में आ जाने पर भी दलित और पिछड़ी जातियों को अपने दलित और पिछड़े होने का दर्द सालता रहता है। जहां शहरीकरण और औद्योगिकीकरण तेज़ हुआ है, वहां परस्पर खानपान और मेलजोल में जाति की बाधा स्वाभाविक रूप से खत्म होती जा रही है। होटलों में जाने वाले उच्च जातियों के लोग़ों के मन में यह सवाल अब नहीं आता कि वहां खाना बनाने वाले और परोसने वाले किस जाति के होंगे, पर देहातों में हालत बुरी है। वहां जातिवाद अभी भी काफ़ी मजबूत स्थिति में है। सरकारी नौकरियों में आरक्षण की व्यवस्था मजबूत होने से पिछड़ी जातियों की हालत में किंचित परिवर्तन आया है, पर यह आटे में नमक के बराबर है। निम्न और दलित जाति से होने की पीड़ा उन जातियों में बदस्तूर जारी है। यद्यपि इस सच्चाई से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि आरक्षण की व्यवस्था के कारण पिछड़ी जातियों में एक क्रीमी लेयर तैयार हो चुका है, पर जब तक सामाजिक तौर पर जाति व्यवस्था का वर्चस्व बना रहता है, इन सब बातों से कुछ होने वाला नहीं है। पिछड़ी जातियों को छोड़ दें तो निम्न और दलित जातियों की स्थिति बहुत ही खराब है। ऐसी स्थिति तब तक बनी रहेगी जब तक उनकी आर्थिक दशा में पर्याप्त सुधार नहीं होता। सिर्फ़ आर्थिक ताकत की बदौलत ही ये ऊंची जातियों द्वारा किये जाने वाले शोषण और अपमान से मुक्ति पा सकते हैं। उनकी आर्थिक दशा में परिवर्तन वर्तमान हालात में नहीं हो सकता। यह तभी संभव है जब देश में बुनियादी आर्थिक-सामाजिक क्रांति हो। ऐसी क्रांति की धमक अब सुनाई पड़ रही है। इस बात को भी नहीं भूलना होगा कि देश में राजनेताओं का एक ऐसा वर्ग तैयार हो चुका है और काफी मजबूत स्थिति में है जो निम्न जातियों और दलितों का सिर्फ़ वोट बैंक के रूप में इस्तेमाल करना चाहता है और कर रहा है। लालू-मुलायम-पासवान-मायावती ऐसे ही राजनेताओं के उदाहरण हैं। इनका निम्न जातियों और दलितों के कल्याण से कोई लेना-देना नहीं है। इन्हें तो बस इनके वोटों के माध्यम से सत्ता की कुर्सी हथियानी है और फ़िर भ्रष्टाचार का सहारा लेकर करोड़ों-अरबों में खेलना है। ये ऐसा कर भी रहे हैं। और ये ही वे लोग़ है जो जनगणना में जाति को शामिल किये जाने पर जोर दे रहे हैं। इनका हित निम्न और दलित जातियों को निम्न और दलित बनाये रखने में ही है, तभी ये अपना राजनीति का धंधा निर्बाध रूप से जारी रख सकते हैं। दलितों को यह भूलना नहीं चाहिए कि जब इन नेताओं को जरूरत महसूस होती है तो ये ऊंची जाति के लोग़ों को भी अपनी तरफ मिलाने से बाज नहीं आते। और तो और, ग़रीब सवर्णों के लिए भी आरक्षण की सुविधा दिये जाने की आवाज़ बुलंद करने लगते हैं।

जहां तक सवाल जनगणना में जाति को शामिल किये जाने अथवा नहीं किये जाने का है, इससे कुछ भी होने वाला नहीं है। हां, इससे जातिवादी नेताओं को शह जरूर मिल सकती है। जाति को इतिहास के कचरेदान में तभी फेंका जा सकता है जब देश की आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था में आमूल परिवर्तन किया जाये, यानी भगत सिंह के शब्दों में क्रांति हो। सिर्फ़ एक सामाजिक-राजनीतिक-आर्थिक विप्लव ही जाति और इससे जुड़े शोषण और अन्याय को खत्म कर सकता है।

दलितों को यह भूलना नहीं चाहिए कि जब इन नेताओं को जरूरत महसूस होती है तो ये ऊंची जाति के लोग़ों को भी अपनी तरफ मिलाने से बाज नहीं आते। और तो और, ग़रीब सवर्णों के लिए भी आरक्षण की सुविधा दिये जाने की आवाज़ बुलंद करने लगते हैं। जहां तक सवाल जनगणना में जाति को शामिल किये जाने अथवा नहीं किये जाने का है, इससे कुछ भी होने वाला नहीं है। हां, इससे जातिवादी नेताओं को शह जरूर मिल सकती है। जाति को इतिहास के कचरेदान में तभी फेंका जा सकता है जब देश की आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था में आमूल परिवर्तन किया जाये, यानी भगत सिंह के शब्दों में क्रांति हो। सिर्फ़ एक सामाजिक-राजनीतिक-आर्थिक विप्लव ही जाति और इससे जुड़े शोषण और अन्याय को खत्म कर सकता है।

- मनोज कुमार झा

खाफ पंचायतों का वर्चस्व

क्या सरकार इसे तोड़ पायेगी?

ह रियाणा में खाप पंचायतों के वर्चस्व का मुद्दा गंभीर होता जा रहा है। कांग्रेस वैसे तो खुले रूप में खापों द्वारा मनमाने फैसले दिये जाने के खिलाफ़ है, पर मुख्यमंत्री हुड्डा में इतनी हिम्मत नहीं दिखाई पड़ती कि वे खापों के खिलाफ़ कड़ा फैसला ले सकें। इसकी वजह यह है कि अगर कोई भी राजनीतिक दल खापों के सर्वथा खिलाफ़ हो जाये तो इसका उसके वोट बैंक पर असर पड़ेगा। खापों के दबाव के कारण ही उद्योगपति और सांसद नवीन जिंदल ने खापों के समर्थन में मुंह खोला तो कांग्रेस ने उनकी लानत-मलामत की। नवीन जिंदल ने अपनी ग़लती को स्वीकार तो किया, पर दबे स्वरों में यह कहने से नहीं हिचके कि उन्हें अपने संसदीय क्षेत्र के लोगों की समस्याओं को देखना ही है। इसके अलावा कई दलों के नेता छुपे अथवा खुले तौर पर खापों के समर्थन में दिखाई पड़ते हैं।

खापों के नेता हिंदू मैरिज एक्ट में संशोधन की मांग कर रहे हैं और इस बात को कह रहे हैं कि सगोत्रीय विवाह नहीं होने चाहिए। दरअसल, हिंदुओं में सगोत्रीय विवाह कहीं नहीं होते। वैवाहिक रिश्तों को तय करने के पहले यह अवश्य देख जाता है कि वर और वधू कहीं एक ही गोत्र के तो नहीं हैं। अगर वे एक ही गोत्र के हों तो वैवाहिक रिश्ता तय नहीं होता। सगोत्रीय समुदाय में वैवाहिक रिश्ते न हों, इके लिए हिंदू मैरिज एक्ट में संशोधन की कतई कोई आवश्यकता नहीं है। लेकिन हरियाणा में खापों का यह विवाद एक राजनीतिक रूप ले चुका है। इस विवाद का आसान हल हो पाना तत्काल तो संभव दिखाई नहीं पड़ता। खापों के नेताओं ने अपना एक बड़ा सम्मेलन करने का निर्णय लिया है जिसमें हरियाणा ही नहीं, दूसरे राज्यों की खापें भी भाग लेंगी और यही नहीं, उन्हें अपने समुदाय के उन लोगों का समर्थन भी मिल रहा है जो विदेशों में बसे हुए हैं और अच्छे-खासे पैसे वाले हैं। वैसे खापों का अस्तित्व सबसे ज्यादा हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में ही है।

खाप पितृ सत्ता के प्रभुत्व वाली सामाजिक व्यवस्था के अंग हैं जिनकी तानाशाही हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के गांवों में चलती रही है। कोई भी सरकार और तथाकथित पंचायती राज की संस्थायें भी इनके वर्चस्व को तोड़ पाने में अक्षम रही हैं। आज भी असली ताकत खापों के ही हाथों में है जिसके माध्यम से वे समाज पर अपने कानूनी-गैर कानूनी फैसले समाज पर आरोपित करते रहे हैं। ये खापें वैवाहिक संबंधों के मामले में 'अति संवेदनशीलता' दिखाती रही हैं और सगोत्रीय वैवाहिक संबंध कायम करने वालों पर अपनी लाठी चलाती रही हैं। सगोत्रीय वैवाहिक संबंध करने वाले परिवारों को गांव निकाला दे देना, जुर्माना आदि लगाना इनके लिए आम बात है। इनके फैसलों का विरोध करने का साहस आम लोगों में नहीं है। ये खापें कहती हैं कि एक गोत्र में विवाह करना वैज्ञानिक दृष्टिकोण के अनुसार भी ठीक नहीं है। इससे उनके होने वाले बच्चे शारीरिक रूप से विक्लांग होते हैं। लेकिन यह सच नहीं है। अगर ऐसा होता तो मुसलमानों में यह सबसे ज्यादा दिखाई पड़ता जहां सगे भाई-बहन को छोड़ कर हर तरह के रिश्तों में शादियां होती हैं।

दरअसल, खापों के सामने समस्या सिर्फ सगोत्रीय विवाह की नहीं है। समस्या यह है कि एक गोत्र ने जिन दूसरे गोत्रों को अपना भाई-बांधव मान लिया है, उनके साथ रिश्ता कैसे हो? सगोत्र रिश्ते तो होते नहीं। हां, जहां उपरोक्त किस्म की समस्या आ जाती है तो गांव वाले कहते हैं कि 'बंधु-बांधव' गोत्र से आने वाली बहू को क्या संज्ञा दी जाये? यह एक पेचीदी समस्या है।

अब फ़िल्मों का प्रभाव बढ़ने से जिसमें यह आम तौर पर दिखाया जाता है कि प्रेमी-प्रेमिका एक ही गांव के हैं और उन्होंने आपस में शादी कर ली है, के प्रभाव में आ कर कतिपय युवक-युवतियां शादी कर लेते हैं और भाग खड़े होते हैं। फिर कुछ दिनों तक यहां-वहां भटकने के बाद वापस अपने गांव लौट आते हैं। इसके बाद भीषण समस्या आ खड़ी होती है। लड़के-लड़की के बालिग होने की अवस्था में पुलिस-प्रशासन का यह कर्तव्य बनता है कि वह उनकी सुरक्षा करे, दूसरी ओर उनकी 'ऑनर किलिंग' का ख़तरा भी मंडराता रहता है। हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में ऑनर किलिंग के कई मामले पिछले दिनों सामने आये है। ऐसे मामले गाहे-ब-गाहे होते ही रहते हैं।

दरअसल, ये सारी पेचीदी समस्यायें इसलिए सामने आ रही हैं कि हमारे समाज का सामंती ढांचा पूरी तरह से अभी टूटा नहीं है। कई मामलों में यह और भी मजबूत ही होता जा रहा है। हरियाणा जो देश का औद्योगिक रूप से आगे बढ़ा हुआ राज्य है, वहां भी यह ढांचा कमजोर नहीं हो पा रहा है। पहले कहा जाता था कि औद्योगिक विकास तेज होने के बाद सामंती सामाजिक संस्थाओं का अस्तित्व धीरे-धीरे स्वत: समाप्त हो जायेगा। पर ऐसा हुआ नहीं। यहां का आर्थिक-सामाजिक विकास कुछ इस तरह का रहा कि सामंती-अर्द्ध सामंती सामाजिक सस्थाओं का वजूद कायम ही रहा। यह तब तक बना रहेगा जब समाज में मूलभूत बदलाव नहीं होते। जहां तक खापों के मनमाने 'तालिबानी' फैसलों का सवाल है, सरकार द्वारा इन पर रोक लगाया जा पाना किसी भी प्रकार संभव नहीं दिखाई पड़ता।

दरअसल, ये सारी पेचीदी समस्यायें इसलिए सामने आ रही हैं कि हमारे समाज का सामंती ढांचा पूरी तरह से अभी टूटा नहीं है। कई मामलों में यह और भी मजबूत ही होता जा रहा है। हरियाणा जो देश का औद्योगिक रूप से आगे बढ़ा हुआ राज्य है, वहां भी यह ढांचा कमजोर नहीं हो पा रहा है।

- मनोज